



योगवाशिष्ठ के संदर्भ में कैवल्य का परिशीलन

Kundan Sharma

भूमिका -महर्षि पतंजलि के योग सूत्र में कैवल्य आध्यात्मिक यात्रा का अंतिम लक्ष्य और चरमोत्कर्ष है। योग दर्शन के चौथे अध्याय जिसे कैवल्य पाद कहा जाता है। महर्षि पतंजलि के अनुसार कैवल्य की प्राप्ति और तुलना किसी स्थान के रूप में नहीं बल्कि एक अवस्था के रूप में वर्णित किया गया है।

1. चित्र की वृत्तियों का पूर्ण निरोध

योगाश्रितवृद्धिनिरोध: केवल यह अवस्था है जहां चित्त की वृत्तियां संस्कारों सहित पूरी तरह साथ हो जाती है। यहां चित्र और पुरुष के बीच का भेद समाप्त होता है।

2. दृष्टा का स्वरूप में अवस्थान

योगसूत्र(1.3) के अनुसार: तदा दष्टः

स्वरूपअवस्थानम्"

इसकी तुलना एक निर्मल दर्पण से की जा सकती है जब दर्पण पर जमी धूल अविद्या और कर्म है जाती है, तो प्रकाश आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप को देख पता है। कैवल्य में दृष्ट पुरुष बुद्धि के माध्यम से नहीं, बल्कि स्वयं में स्थित होती है।

3. गुणा को अपने कारण में विलीन होना प्रतिप्रसव

प्रकृति के तीन गुणहैं- सत्व, रजश और तमश- जो पुरुष के लिए भोग और अपवर्ग मोक्ष का सृजन करते हैं, उनका प्रयोजन कैवल्य प्राप्त होने पर समाप्त हो जाता है।

.तुलना: इस प्रति प्रसव कहा गया है। जैसे मिट्टी से बना घड़ा वापस मिट्टी में मिल जाए, इस दौरान चित के गुण अपने मूल कारण प्रकृति में विलीन हो जाते हैं।

4. आदित्य का नाश और विवेक ख्याति

कैवल्य की तुलना अंधकार के अभाव प्रकाश से की गई है। जब विवेक ख्याति सत्य और सत्य का भेद करने वाली बुद्धि निरंतर बनी रहती है, तब क्लेशों का नाश होता है। यह अवस्था दुखों की आभाव की स्थिति है।

पतंजलि के अनुसार योग सूत्र में कैवल्य को इस प्रकार से वर्णित किया गया है।

पुरुषार्थ शून्याना गुणाना प्रतिप्रसवः कैवल्य, स्वरूप प्रतिष्ठा वा चित्तीशक्तिरिती

जब गुणा का पुरुष के लिए कोई प्रयोजन शेष नहीं रहता, तब उनका अपने मूल कारण में लीन हो जाना कैवल्य है, याफिर, चैतन्य शक्ति चित शक्ति का अपने वास्तविक स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाना ही कैवल्य है। पतंजलि के अनुसार कैवल्य कोई शून्य की स्थिति नहीं है, बल्कि यह पूर्णता की स्थिति है। यह अज्ञानता के बंधन से छूटकर समय के शुद्ध स्वरूप को का लेने का नाम है।



*श्रीमद् भागवत गीता में कैवल्य का शब्द का प्रयोग सांख्य दर्शन या योग सूत्र की तरह बार-बार नहीं किया गया है लेकिन कैवल्य की जो अवस्था है यानी मोक्ष, परम पद, या ब्रह्मा निर्वाण-उसका विस्तार में वर्णन मिलता है गीता में कैवल्य का अर्थ केवल "अकेलापन" नहीं, बल्कि केवल भाव है जहां जीवात्मा प्रकृति के गुणा से मुक्त होकर अपने शुद्ध स्वरूप ब्रह्म में स्थित हो जाती है वही गीता में कैवल्य को इस प्रकार से बताया गया है।

1. गीता में कैवल्य मोक्ष की तुलना और स्वरूप:

ब्रह्मा निर्वाण गीता के छठे अध्याय में योगरूढ़ पुरुष की तुलना ऐसे दीपक से की गई है जो वायु रहित स्थान में स्थित हो जिस प्रकार हवा न होने पर दीपक की लौ हिलती नहीं, इस प्रकार के विलय या आत्म साक्षात्कार की स्थिति में चित्र पूर्णता स्थिर हो जाता है। इसे ब्रह्मा निर्माण कहा गया है, जहां दुखों का सर्वथा अभाव होता है।

2. समुद्र से तुलना

दूसरे अध्याय के अंत में भगवान कृष्ण कैवल्य के मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति की तुलना समुद्र से करते हैं

श्री कृष्ण जी का कहना है कि जैसे चारों ओर से नदियां समुद्र में जाकर मिलती हैं, फिर भी समुद्र विचलित नहीं होता और अपनी मर्यादा में स्थिर रहता है, वैसे ही मुक्ति पुरुष के पास भोग आते हैं, पर वे उसे विचलित नहीं कर पाते। वह पूर्ण शांति केवल के समान स्थिति को प्राप्त होता है।

3. गुणों से अतीत

14 में अध्याय में कैवल्य की अवस्था को गुणातीत कहा गया है।

जब मनुष्य सत्व, राज और तम इन तीनों गुणा को लांग जाता है, तब वह जन्म मृत्यु और बुढ़ापे के कष्टों से मुक्त होकर अमृत मोक्ष का पान करता है। यहां के बिल्ली की तुलना एक ऐसी स्थिति से है जहां प्रकृति के विकार आत्मा को स्पर्श नहीं कर पाते।

कैवल्य प्राप्ति के प्रमुख लक्षण

पक्ष। विवरण

अद्वैत भाव- उसे सर्वत्र एक ही परमात्मा के दर्शन होते हैं वासुदेव:मिति

समत्व- सुख-दुख लाभ हानि और मान अपमान में उसकी बुद्धि स्थिर रहती है।

अनाशक्ति- वह कर्म तो करता है, लेकिन फल की इच्छा का त्याग करता है (निष्काम कर्म)

स्व स्वरूप में स्थिति-वह शरीर मन और बुद्धि से पृथक अपनी आत्मा दृष्टा रूप में देखता है।

सांख्य दर्शन में कैवल्य का अर्थ पुरुष आत्मा का प्रकृति से पूर्णता अलग हो जाना। गीता इस विचार को और ऊंचा ले जाती है गीता के अनुसार कैवल्य केवल पृथकता नहीं, अपितु परमात्मा में विलीन हो जाना है। यह अकेलेपन की स्थिति नहीं बल्कि पूर्णता की स्थिति है।



Cover Page



2 2 7 7 - 7 8 8 1



पतंजलि और गीता के अनुसार कैवल्य का शब्द का प्रयोग

श्रीमद् भागवत गीता में केवल शब्द का प्रयोग सांख्य दर्शन या योग सूत्र पतंजलि की क्रांति बार-बार नहीं मिलता परंतु मोक्ष परम गति और ब्रह्मा निर्वाण के रूप में इसकी अवधारणा को अत्यंत विस्तार और गहराई से समझाया गया है। गीता में कैवल्य उसे अवस्था को कहा गया है। जहां जीवात्मा प्रकृति के गुणों से सर्वथा मुक्त होकर अपने शुद्ध स्वरूप ब्रह्म में स्थित हो जाती हैं।

गीता के 14 में अध्याय में भगवान कृष्ण गुणातीत होने की चर्चा करते हैं। केवल की तुलना उसे स्थिति से की गई है जहां व्यक्ति सत्व रज और तम इन तीनों गुणा से प्रभाव से ऊपर उठ जाता है।

विवरण: जब साधक यह जान लेता है कि समस्त कार्य गुणों के द्वारा ही किया जा रहे हैं और वह स्वयं आत्मा इन गुणों का केवल साक्षी है, तब कैवल्य के निकट होता है।

तुलना: यह अवस्था एक दीपशिखा के समान है जो वायु रहित स्थान में अडिग रहती है।

2. ब्रह्मा निर्वाण

. गीता के पांचवें अध्याय में निर्वाण शब्द का प्रयोग हुआ है। यहां कैवल्य की तुलना शांत महासागर से की गई है।

कहां गया है कि जैसे नदियां समुद्र में गिरकर अपना अस्तित्व खो देती हैं, वैसे ही आत्मज्ञानी पुरुष ब्रह्म में लीन हो जाता है।

योग और संख्या का समन्वय

गीता के बल्ले को प्राप्त करने के दो मुख्य मार्गों की तुलना करती है संख्या ज्ञान और योग कर्म

. सांख्यिकी दृष्टि यहां के कैवल्य की विवेक ख्याति है

अर्थात् प्रकृति और पुरुष के बीच के अंतर को स्पष्ट जान लेना है।

योग की दृष्टि यहां के कैवल्य चित्रवृत्ति निरोध और ईश्वर के पूर्ण लय हैं।

सामान्य अवधारणा

भारतीयदर्शन, विशेष कर योग सूत्र केसंदर्भ में, कैवल्य आध्यात्मिक विकास की सर्वोच्च अवस्था है। कैवल्य शब्द केवल से बना है, जिसका अर्थ है अनन्य, शुद्ध या अकेला।

सामान्य अवधारणा में इस आत्मा की पूर्ण स्वतंत्रता और मोक्ष के रूप में देखा जाता है। यहां इसका संक्षिप्त और स्पष्ट परिशीलन (विशेषण) दिया गया है।

अलग-अलग कैवल्य शब्द को अपने द्वारा प्रतिपादित किया गया है। कैवल्य का शाब्दिक अर्थ, अकेलापन पृथकता। लेकिन यह सांसारिक अकेलापन नहीं है अपितु इसका अर्थ पुरुष आत्मा का प्रकृति प्रदार्थ/माया) के बंधनों से पूरी तरह से मुक्त हो जाना। जब चित



की वृत्तियां साथ हो जाती है और आत्मा अपने पृथक्ता। लेकिन यह सांसारिक अकेलापन नहीं है। इसका अर्थ पुरुष आत्मा का प्रतीक पदार्थ माया के बंधनों से पूरी तरह मुक्त हो जाना है। जब चित की वृत्तियां साथ हो जाती हैं और आत्मा अपने वास्तविक स्वरूप को पहचान लेती है, तो उसे कैवल्य ले कहा जाता है।

कैवल्य की प्रक्रिया : विवेक ख्याति Discrimination से होकर गुजरता है।

* प्रकृति और पुरुष का भेद: शादी किए समझता है कि शरीर, मां और बुद्धि प्रकृति का हिस्सा हैं, जबकि वह स्वयं आत्मा इनसे परे एक दृष्टा है।

* अधिकार समाप्ति: जब प्रकृति का कार्य सादिक को अनुभव और मोक्ष प्रदान करना है।

* कैवल्य की अवस्था की विशेषताएं

* कैवल्य कोई स्थान नहीं बल्कि चेतन की एक स्थिति है

* *दुखों का अंत जन्म मरण के चक्कर को त्रिविध तापों आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक से पूर्ण मुक्ति।

* गुणातीत होना: सत्व, रज और तम - इन तीनों गुणों के प्रभाव से मुक्त हो जाना।

* स्वरूपप्रतिष्ठा: महर्षि पतंजलि के अनुसार दृष्टा आत्मा का अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित हो जाना ही कैवल्य है।

* कैवल्य परिशीलन

भारतीय दर्शन, विशेष रूप से योग सूत्र और सांख्य दर्शन की एक अत्यंत सूक्ष्म और गंभीर अवधारणा है। इसका शाब्दिक अर्थ है कैवल्य का गहन अनुशीलन या पूर्ण स्वतंत्रता का अभ्यास। सामान्य भाषा में इस आत्मा की उसे अवस्था के रूप में समझा जा सकता है जहां वह प्रकृति के बंधनों से पूरी तरह मुक्त होकर अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित हो जाती है।

* कैवल्य परिशीलन के व्यावहारिक पक्ष

एक सामान्य जिज्ञासु के लिए कैवल्य परिशीलन का अर्थ केवल गुफा में बैठना नहीं है, बल्कि जीवन में निम्नलिखित का अभ्यास करना है।

दृष्टा भाव :

स्वयं को शरीर और विचारों से अलग हटकर एक साक्षी के रूप में देखना।

असंगता

सांसारिक वस्तुओं और संबंधों में रहते हुए भी उनसे आंतरिक रूप से ना चिपकाना।

प्रकृति लय

यह समझना की क्रोध मोह और अहंकार प्रकृति के गुण है आत्मा के नहीं।



Cover Page



*ज्ञान योग और कैवल्य (Kaivalya) का संबंध भारतीय दर्शन, विशेषकर सांख्य और वेदांत में अत्यंत गहरा है। 'ज्ञान योग' जहाँ सत्य को जानने का मार्ग है, वहीं 'कैवल्य' उस ज्ञान की चरम परिणति या मोक्ष की अवस्था है।

आइए, इस गंभीर विषय का तार्किक और आध्यात्मिक परिशीलन (Analysis) करते हैं:

1. ज्ञान योग: विवेक का मार्ग

ज्ञान योग का अर्थ केवल सूचना एकत्र करना नहीं है, बल्कि विवेक (Discrimination) जागृत करना है। यह मार्ग मुख्य रूप से तीन चरणों पर आधारित है:

श्रवण: गुरु या शास्त्रों से सत्य (ब्रह्म/पुरुष) के स्वरूप को सुनना।

मनन: सुनी गई बातों पर तर्कपूर्ण विचार करना ताकि संशय दूर हों।

निदिध्यासन: उस सत्य का निरंतर ध्यान करना ताकि वह अनुभव (Realization) में बदल जाए।

इसका मुख्य उद्देश्य 'द्रष्टा' (Self) और 'दृश्य' (Matter/Prakriti) के बीच के अंतर को समझना है।

2. कैवल्य: पूर्ण स्वतंत्रता की अवस्था

'कैवल्य' शब्द 'केवल' से बना है, जिसका अर्थ है—अकेला या शुद्ध। योग सूत्र और सांख्य दर्शन के अनुसार, जब पुरुष (चेतना) को यह बोध हो जाता है कि वह प्रकृति (माया/पदार्थ) के गुणों से पूरी तरह भिन्न है, तब वह अपने शुद्ध स्वरूप में स्थित हो जाता है।

"तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्" (योग सूत्र 1.3)

अर्थात्: तब द्रष्टा अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित हो जाता है।

कैवल्य की विशेषताएँ:

द्वंद्व का अभाव: सुख-दुःख, लाभ-हानि से परे की स्थिति।

अविद्या का नाश: अज्ञान के आवरण का पूरी तरह हट जाना।

स्वतंत्रता: जन्म-मरण के चक्र और कर्मों के बंधन से मुक्ति।

3. ज्ञान योग और कैवल्य का अंतर्संबंध

ज्ञान योग वह 'साधन' है जिसका 'साध्य' (लक्ष्य) कैवल्य है। इनका संबंध निम्नलिखित बिंदुओं से समझा जा सकता है:

पक्ष ज्ञान योग (साधन) कैवल्य (साध्य)

प्रक्रिया विश्लेषण और नेति-नेति (यह नहीं, वह नहीं)। अंतिम एकता या शुद्धता का अनुभव।

भूमिका अज्ञान की परतों को हटाना। सत्य के प्रकाश में स्थिर होना।



अवस्था यह एक सक्रिय मानसिक और आध्यात्मिक अभ्यास है। यह प्रयासशून्य, शाश्वत शांति की अवस्था है।

दार्शनिक निष्कर्ष

ज्ञान योग के माध्यम से जब साधक को यह बोध होता है कि "मैं शरीर, मन या बुद्धि नहीं हूँ, बल्कि अनंत चैतन्य हूँ," तो चित्त की वृत्तियों का निरोध हो जाता है। इसी वृत्ति-निरोध के परिणामस्वरूप कैवल्य की प्राप्ति होती है। यहाँ 'अकेलापन' नकारात्मक नहीं है, बल्कि 'पूर्णता' का सूचक है जहाँ आत्मा को किसी बाहरी सहारे की आवश्यकता नहीं रहती।

*भक्ति योग भारतीय दर्शन और अध्यात्म का वह सरलतम किंतु अत्यंत प्रभावशाली मार्ग है, जहाँ भक्त और भगवान के बीच का संबंध केवल प्रेम पर आधारित होता है। 'परिशीलन' का अर्थ है किसी विषय का गहरा अध्ययन, अभ्यास और उसमें निरंतर लीन रहना।

यहाँ भक्ति योग के प्रमुख पहलुओं का एक संक्षिप्त और स्पष्ट परिशीलन प्रस्तुत है:

1. भक्ति योग का मूल स्वरूप

भक्ति शब्द 'भज्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है—सेवा करना या प्रेमपूर्वक स्मरण करना। नारद भक्ति सूत्र के अनुसार:

"सा त्वस्मिन् परमप्रेमस्वरूपा।"

(अर्थात्, ईश्वर के प्रति परम प्रेम ही भक्ति है।)

यह मार्ग ज्ञान या कर्म की जटिलताओं के बजाय हृदय की शुद्धता और भाव को प्रधानता देता है।

2. भक्ति के दो प्रमुख प्रकार

परिशीलन की दृष्टि से भक्ति को दो श्रेणियों में बांटा जाता है:

वैधी भक्ति: इसमें नियमों, अनुष्ठानों, मूर्ति पूजा और शास्त्रों के मर्यादा पालन का महत्व होता है। यह शुरुआती साधक के लिए अनुशासन का मार्ग है।

रागानुगा भक्ति: जब भक्त के हृदय में ईश्वर के प्रति सहज और स्वाभाविक प्रेम उमड़ता है, तो वह नियमों से ऊपर उठ जाता है। यह प्रेम की पराकाष्ठा है।

3. नवधा भक्ति (नौ मार्ग)

श्रीमद्भागवत पुराण के अनुसार, भक्ति के नौ अंग बताए गए हैं जो साधक को ईश्वर के समीप ले जाते हैं:

अंग अर्थ

श्रवण ईश्वर की कथाओं और महिमा को सुनना।

कीर्तन भगवान के नाम और गुणों का गान करना।

स्मरण निरंतर प्रभु का ध्यान करना।



पाद-सेवन चरणों की सेवा (संपूर्ण मानवता की सेवा)।

अर्चन विधिवत पूजा और उपासना।

वंदन ईश्वर को प्रणाम और स्तुति करना।

दास्य स्वयं को ईश्वर का सेवक मानना।

सख्य ईश्वर को अपना मित्र मानना (जैसे अर्जुन)।

आत्म-निवेदन स्वयं को पूरी तरह ईश्वर को समर्पित कर देना।

भक्ति योग का मनोवैज्ञानिक लाभ

आज के आधुनिक युग में भक्ति योग केवल आध्यात्मिक ही नहीं, बल्कि मानसिक शांति का भी आधार है:

अहंकार का नाश: 'मैं' की जगह 'तू' (ईश्वर) को स्वीकार करने से ईगो कम होता है।

भावनात्मक संतुलन: ईश्वर पर विश्वास होने से तनाव और चिंता (Anxiety) कम होती है।

एकाग्रता: निरंतर नाम जप से मन की चंचलता समाप्त होती है।

5. आधुनिक संदर्भ में परिशीलन

भक्ति का अर्थ संसार का त्याग करना नहीं है, बल्कि संसार में रहते हुए हर कार्य को ईश्वर का मानकर करना है। जब आप अपने कर्म को ही पूजा बना लेते हैं, तो कर्म योग और भक्ति योग का संगम हो जाता है।

*ध्यान योग का परिशीलन (अभ्यास) केवल आँखें बंद करके बैठने का नाम नहीं है, बल्कि यह स्वयं को जानने और मानसिक शांति प्राप्त करने की एक व्यवस्थित प्रक्रिया है। भारतीय दर्शन और विशेषकर पतंजलि योगसूत्र में इसे 'ध्यान' कहा गया है, जो धारणा के बाद और समाधि से पहले की अवस्था है।

यहाँ ध्यान योग के परिशीलन के मुख्य चरणों और बारीकियों को संक्षेप में समझाया गया है:

1. तैयारी (पूर्व-अभ्यास)

ध्यान में उतरने से पहले शरीर और वातावरण को तैयार करना आवश्यक है:

स्थान: शांत, स्वच्छ और हवादार जगह चुनें।

समय: 'ब्रह्म मुहूर्त' (सूर्योदय से पूर्व) या संध्या काल सबसे उपयुक्त माना जाता है।

आसन: सिद्धासन, सुखासन या पद्मासन में बैठें। रीढ़ की हड्डी (Spine) सीधी होनी चाहिए ताकि ऊर्जा का प्रवाह सुगम हो।



2. परिशिलन की विधि (Steps of Practice)

ध्यान की प्रक्रिया को इन तीन मुख्य चरणों में विभाजित किया जा सकता है:

चरण विवरण

काया स्थिरता शरीर को पूरी तरह स्थिर छोड़ दें। हलचल बंद होने पर ही मन शांत होना शुरू होता है।

प्राण संयम अपनी आती-जाती सांसों के प्रति सजग हों। सांस को रोकने का प्रयास न करें, बस उसे देखें।

प्रत्याहार बाहरी आवाजों और विषयों से हटकर अपनी चेतना को भीतर की ओर मोड़ें।

ध्यान के प्रमुख प्रकार

परिशिलन के दौरान आप अपनी रुचि के अनुसार किसी एक पद्धति को चुन सकते हैं:

आनापानसती: केवल श्वास-प्रश्वास के आवागमन पर ध्यान केंद्रित करना।

मंत्र ध्यान: किसी पवित्र ध्वनि या मंत्र (जैसे 'ॐ') का मानसिक जाप।

साक्षी भाव (Mindfulness): मन में उठने वाले विचारों को बिना किसी निर्णय (Judgment) के केवल एक दर्शक की भांति देखना।

ज्योति ध्यान: दोनों भौहों के बीच (आज्ञा चक्र) पर एक दीपक की लौ या प्रकाश की कल्पना करना।

4. अभ्यास के दौरान आने वाली बाधाएं

परिशिलन करते समय अक्सर ये चुनौतियां आती हैं, जिनसे घबराना नहीं चाहिए:

विक्षेप (Distractions): मन का बार-बार भटकना। जब ऐसा हो, तो धीरे से अपना ध्यान वापस सांस पर ले आएंगे।

तन्द्रा (Drowsiness): अभ्यास के दौरान नींद आना। इससे बचने के लिए पीठ सीधी रखें और पेट खाली रखें।

अधीरता: परिणाम तुरंत न मिलना। ध्यान एक धीमी और निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है।

5. ध्यान के लाभ

नियमित परिशिलन से न केवल आध्यात्मिक, बल्कि वैज्ञानिक लाभ भी मिलते हैं:

तनाव में कमी: कोर्टिसोल हार्मोन का स्तर कम होता है।

एकाग्रता: निर्णय लेने की क्षमता और याददाश्त में सुधार होता है।

भावनात्मक संतुलन: क्रोध, भय और चिंता पर नियंत्रण बढ़ता है।

"ध्यान का अर्थ है—विचारों का विसर्जन और स्वयं की उपस्थिति का अनुभव।"



Cover Page



*वैराग्य योग भारतीय दर्शन और अध्यात्म का वह आधार स्तंभ है, जो हमें संसार की नश्वरता को समझकर आंतरिक शांति की ओर ले जाता है। 'परिशीलन' का अर्थ है—गहरा अभ्यास, चिंतन और उसे जीवन में उतारना।

वैराग्य का अर्थ जुड़ाव का अभाव नहीं, बल्कि दृष्टिकोण का शोधन है। यहाँ वैराग्य योग में परिशीलन के मुख्य चरणों का संक्षिप्त विवेचन है:

1. वैराग्य के स्वरूप का बोध

वैराग्य का अर्थ घर छोड़कर भागना नहीं है। जैसा कि गीता और योगसूत्रों में वर्णित है, यह दो स्तरों पर कार्य करता है:

अपर वैराग्य: इंद्रियों के विषयों (भोग-विलास) में दोष देखना और उनसे दूरी बनाना।

पर वैराग्य: जब व्यक्ति को आत्मज्ञान की अनुभूति होती है और वह गुणों के खेल (प्रकृति) से ऊपर उठ जाता है।

2. अभ्यास और वैराग्य (द्वैध शक्ति)

महर्षि पतंजलि के अनुसार, मन की वृत्तियों को रोकने के दो ही मार्ग हैं: अभ्यास और वैराग्य।

“अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः” (योगसूत्र 1.12)

परिशीलन सूत्र: अभ्यास हमें लक्ष्य की ओर बढ़ाता है, और वैराग्य उन बाधाओं को हटाता है जो हमें पीछे खींचती हैं।

3. वैराग्य योग के चार चरण (परिशीलन प्रक्रिया)

साधक जब वैराग्य का परिशीलन करता है, तो वह इन अवस्थाओं से गुजरता है:

यतमान: इंद्रियों को विषयों से खींचने का सचेत प्रयास करना।

व्यतिरेक: यह विश्लेषण करना कि किन बुराइयों को जीत लिया गया है और किन पर काम करना बाकी है।

एकेन्द्रिय: जब इंद्रियाँ शांत हो जाती हैं, लेकिन मन में सूक्ष्म इच्छाएँ (वासना) बनी रहती हैं।

वशीकार: वह अवस्था जहाँ किसी भी दृश्य या अदृश्य वस्तु के प्रति कोई आकर्षण या तृष्णा शेष न रहे।

4. व्यावहारिक परिशीलन के लिए सुझाव

वैराग्य योग को दैनिक जीवन में उतारने के लिए इन बिंदुओं पर ध्यान दिया जा सकता है:



* विवेक (Discernment/Wisdom) जैसे उच्च मार्गों का परिशीलन यानी उनका निरंतर अभ्यास और अनुशीलन करना, मनुष्य के व्यक्तित्व को गहराई और स्पष्टता प्रदान करता है। 'विवेक' केवल सही और गलत के बीच का चुनाव नहीं है, बल्कि सत्य और असत्य, नित्य और अनित्य के बीच भेद करने की क्षमता है।

यहाँ विवेक के मार्ग पर चलने के कुछ प्रमुख सोपान दिए गए हैं:

1. नीर-क्षीर विवेक (सत्य का अन्वेषण)

जिस प्रकार हंस दूध और पानी को अलग कर देता है, उसी प्रकार जीवन की जटिलताओं में से सार तत्व को चुनना ही विवेक का पहला चरण है।

सारग्रही बनें: सूचनाओं के अंबार में से केवल उसी ज्ञान को अपनाएँ जो आपके उत्थान के लिए आवश्यक हो।

तटस्थता: भावनाओं के आवेग में बहने के बजाय स्थिति को तटस्थ होकर देखना सीखें।

2. आत्म-निरीक्षण (Self-Reflection)

विवेक का मार्ग बाहर से नहीं, बल्कि भीतर से शुरू होता है।

चिंतन: प्रतिदिन कुछ समय मौन रहकर अपने विचारों और निर्णयों का विश्लेषण करें।

प्रश्न पूछें: "क्या यह निर्णय मेरे अहंकार की तुष्टि के लिए है या मेरे कल्याण के लिए?"

3. प्रज्ञा का विकास (Cultivating Wisdom)

शास्त्रों का अध्ययन और विद्वानों की संगति (सत्संग) विवेक को पैना करती है।

स्वाध्याय: महान दार्शनिकों और विचारकों के अनुभवों को पढ़ें।

सतर्कता: वर्तमान क्षण में पूरी तरह सजग रहना ही विवेक को जागृत रखता है।

4. राग-द्वेष से मुक्ति

जब मन किसी के प्रति अत्यधिक अनुराग (प्रेम) या द्वेष (घृणा) से भरा होता है, तो विवेक धुंधला पड़ जाता है।

संतुलन: निष्पक्ष होकर निर्णय लेना विवेकपूर्ण मार्ग का लक्षण है।

धैर्य: जल्दबाजी में लिए गए निर्णय अक्सर अविवेकपूर्ण होते हैं। धैर्य विवेक का सहचर है।

विवेकपूर्ण जीवन के लाभ

पक्ष प्रभाव

निर्णय क्षमता आप द्विधा (Confusion) से मुक्त होकर दृढ़ निश्चय कर पाते हैं।



Cover Page



मानसिक शांति अनावश्यक चिंताओं और पछतावे से मुक्ति मिलती है।
चरित्र निर्माण समाज में आपकी विश्वसनीयता और सम्मान बढ़ता है।
विवेक ही वह दीपक है जो अज्ञान के अंधकार में भी सही मार्ग दिखाता है।"